न्यायालय की भूमिका पर उठते सवाल

वर्तमान में उच्चतम न्यायालय की भूमिका को लेकर धारणा बढ़ रही है कि यह केंद्र सरकार की एक विस्तारित शाखा बन गया है। जब न्यायालय राफेल जैसे मामले में सरकार का पक्ष लेता है , तो कहा जाता है कि न्यायाधीश बिक चुके हैं। जब यह मामलों को सूचीबद्ध करने में देर करता है, तो कहा जाता है कि चुनावी बांड और विमुद्रीकरण जैसे संवेदनशील मामलों पर सरकार ही सुनवाई को विलंबित करना चाहती है। जब यह एन जे ए सी जैसे मामलों में सरकार के विरूद्ध फैसला करता है, तो इसे जल्दी से खारिज कर दिया जाता है।

1950 से लेकर आज तक गोपालन मामले से न्यायालय के इतिहास के दौरान, इसने आमतौर पर राष्ट्रीय सुरक्षा के मामलों में सरकारों को व्यापक सहयोग दिया है। तो फिर आज ही न्यायालय पर न्यायिक बर्बरता का आरोप क्यों लगाया जा रहा है ?

इस प्रश्न का उत्तर इस तथ्य में निहित है कि हम चरम अभिव्यक्ति के युग में रहे हैं। यहाँ संयत भाषणबाजी दुर्लभ है। राजनीति की तरह ही, अतिवादी भाषण के प्रमुख प्रतिपादक न्यायालय और जनता के प्रमुख सदस्य ही होते हैं।

कानूनी बिरादरी के भीतर के लोगों को अच्छी तरह से मालूम है कि मामलों को कैसे तत्काल सूची में लाया जा सकता है, या कतार से कूदकर आगे कैसे बढ़ा जा सकता है। पत्रकार अर्णव गोस्वामी के मामले में न्यायालय ने ऐसा ही कुछ रवैया दिखाया है। इसे सरकार के प्रति न्यायालय की बंदगी या बौद्धिक आलस्य कहा जा सकता है।

न्यायालय का ऐसा आलस्य ही मामलों को सूचीबद्ध करने की अस्पष्टता या अपारदर्शिता के मूल कारण की ओर ले जाता है। 2018 में प्रमुख पाँच जजों द्वारा की गई प्रेस कांफ्रेंस मामलों को सूचीबद्ध करने में हेराफेरी से ही जुडी हुई

थी। इसके बाद भी कोई सुधार नहीं किए गए। न्यायाधीश गोगोई ने तो उच्चतम न्यायालय में घूस को लेकर पुलिस की मदद भी लेनी चाही थी। इसके परिणाम भी अस्पष्ट हैं।

वकीलों के चेम्बर में बैठे क्लर्क आपको आसानी से बताते हैं कि मामले को सूची में ऊपर लाने या पीछे करने के लिए क्या किया जा सकता है। ऐसी प्रथा चलती चली जा रही है। अगर न्यायालय ऐसे अभ्यासों पर नियंत्रण नहीं रखता है , तो आज के इस ध्रुवीकृत समय में राजीनतिक उद्देश्यों पर आरोप लगना साधारण सी बात है। अर्णव गोस्वामी के अलावा भी न्यायालय ने लॉकडाउन काल में 77 ऐसे मामले निपटाए हैं।

मुंबई उच्च न्यायालय में 4 हजार से अधिक जमानत याचिकाएं लंबित थीं, और ऐसे आठ प्रमुख उच्च न्यायालयों में 30 जून, 2019 तक कुल 37,245 आवेदन थे। इन विचाराधीन कैदियों के नाम हमको नहीं पता। सत्ता के गलियारों में कोई इनका नाम सूची में प्राथमिकता पर लाने वाला भी नहीं है। यह हमारे तंत्र की एक कड़वी सच्चाई है, जिसका संज्ञान लेने वाला कोई नहीं है।

'द टाइम्स ऑफ इंडिया' में प्रकाशित अर्घ्य सेनगुप्ता के लेख पर आधारित। 20 नवम्बर, 2020

AFEIAS